**ओ३म्**

**‘वेद प्रचार में सभी श्रेष्ठ कार्यों का समावेश होने से यही कर्तत्व है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

भारत में वेद प्रचार का शुभारम्भ महाभारत युद्ध के बाद पहली बार महर्षि दयानन्द (1825-1883) ने अपनी शिक्षा पूरी कर सन् 1863 में दण्डी स्वामी प्रभाचक्षु गुरु विरजानन्द सरस्वती से दीक्षा के बाद किया था। अद्वैत मत व वेद मत में भिन्नता होने के कारण अद्वैतमत प्रचार को हम वेद प्रचार से इतर मानते हैं। ऋषि दयानन्द जी के गुरु से उनको जो वैदिक ज्ञान व मार्गदर्शन मिला था उसके अनुसार उन्हें ईश्वर प्रदत्त वैदिक ज्ञान और वेद के आधार पर प्रचलित व वेद सम्मत सभी परम्पराओं को जारी रखना व वेद विरुद्ध कार्यों, मूर्ति पूजा व उपासना तथा नाना संस्कारों व मानव जीवन शैली को सुधारना वा वेदानुकूल परिवर्तित करना था। जो भी कार्य वेदविरुद्ध व मानव जीवन के लिए अहितकर व हानिकारक था, उसे छुड़वाना भी उनका उद्देश्य था। वेद प्रचार कार्यक्रम में केवल वेदों का हिन्दी व अन्य भाषाओं में भाष्य वा अनुवाद व उनका प्रकाशन ही सम्मिलित नहीं है, अपितु वेद की शिक्षाओं को आत्मसात कर उसके अनुसार जीवन व्यतीत करना और देश व समाज के सभी लोगों को ऐसा ही करने के लिए प्रेरित करना, वेद प्रचार की मुख्य भावना व विचार है। इसी कारण महर्षि दयानन्द जहां प्रातः 3:00 बजे निद्रात्याग कर ईश-चिन्तन, शौच, भ्रमण व वैदिक व योग की विधि से ईश्वरोपासना करते थे वहीं वह वैदिक विचारधारा पर आधारित देश व समाज के लिए उपयोगी वेद भाष्य सहित इतर छोटे-बड़े ग्रन्थों का प्रणयन, वेद व अन्य विषयों पर प्रवचन व व्याख्यान व इनके साथ लोगों की सभी प्रकार की धार्मिक व सामाजिक शंकाओं का समाधान भी करते थे। इसी कारण उन्होंने समाज में प्रचलित जड़ पदार्थों व नाना प्रकार की मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, जन्मना जाति प्रथा, छुआछूत वा अस्पर्शयता, सामाजिक भेदभाव, लिंगभेद आदि का प्रबल विरोध किया था। इसके साथ ही उन्होंने स्त्री व शूद्रों के लिए वेदाध्ययन पर प्रतिबन्ध का प्रतिवाद कर वेद प्रमाण देकर समाज के प्रत्येक व्यक्ति को वेदाध्ययन का अधिकार दिया। उन्होंने वैदिक शिक्षा के पुनरुद्धार के लिए संस्कृत पाठशालायें खोली वहीं **उन्होंने महात्मा ज्योतिबा फूले द्वारा स्थापित पूना की शूद्र व अतिशूद्र स्त्रियों की पाठशाला में धर्म व शिक्षा की उन्नति के उपदेश भी दिये थे।** इन धार्मिक व सामाजिक सुधार विषयों पर आज कहीं काई विरोध नही करता जिसका अर्थ है कि उन्होंने स्वामी दयानन्द के तर्कों को स्वीकार कर लिया है। इस स्थिति के होने पर भी समाज से सभी धार्मिक व सामाजिक बुराईयां दूर नहीं हुईं हैं, अतः आज भी वेद प्रचार को उसी प्रकार से करने की आवश्यकता है जिस प्रकार से ऋषि दयानन्द ने अपने समय में किया था।

 मनुष्य की सर्वाधिक आवश्यकता स्वस्थ व निरोग शरीर व सुशिक्षा की ही है। स्वस्थ व बलवान शरीर में ही स्वस्थ व बलवान बुद्धि व मन हो सकता है। जिसका मन व बुद्धि अच्छी होगी, वह अच्छे कार्य करेगा और जिसकी चिन्तन व विचार प्रणाली ही कमजोर व निम्नतम होगी, वह श्रेष्ठ जीवन व चरित्र का स्वामी नहीं हो सकता। अतः मनुष्य को स्वस्थ व बलवान बनाना व इसके लिए प्रचार करना आर्यसमाज का उद्देश्य है जिसमें प्रातः जागरण, भ्रमण, योगासन, ध्यान-चिन्तन व ईशोपासना सहित शुद्ध शाकाहारी गोदुग्ध, फल व अन्न से बने भोजन का सेवन करना है। आज के समय में अधिकांश लोगों का यह अभ्यास बिगड़ा हुआ है जिसको नियमित रूप से करने के लिए प्रचार की आवश्यकता है। पतंजलि योगपीठ के संस्थापक स्वामी रामदेव जी ने इस दिशा में अच्छा कार्य किया है जिसके लिए वह साधुवाद के पात्र हैं। इस कार्य में उन्हें देशवासियों सहित विश्व के अधिकांश लोगों का समर्थन मिला है और आज के समय में योग व योगासनों को विश्व में जो मान्यता व समर्थन मिला है, वह स्थिति पहले कभी न होने से अभूतपूर्व है। इस कार्य को और बढ़ाना है जब तक कि सभी लोग स्वास्थ्य के प्रति सचेत होकर इसका अभ्यास व पालन न करने लगें। नशा, मांसाहार व अन्य अभक्ष्य पदार्थों का सेवन यथा अण्डा, मच्छली, नाना प्रकार के पशु व पक्षियों का मांस तथा धूम्रपान आदि के विरोध में भी योग प्रचार के समान अभियान चलाने की आवश्यकता है। इन पदार्थों के सेवन से भी मनुष्य का स्वास्थ्य बिगड़ता है, नाना प्रकार के रोग शरीर में होते हैं और मनुष्य रोगी होकर अल्पकाल में मृत्यु से ग्रास बन जाता है। **आजकल आर्यसमाज में बहुत से लोग अन्य कार्यों को छोड़कर केवल नशा के विरोध में प्रचार व आन्दोलन करते देखे जा रहे हैं। हमें लगता है कि क्या नशा विरोधी आन्दोलन वेद प्रचार से पृथक कोई स्वतन्त्र कार्य है? आर्यसमाज के विद्वानों व नेताओं को वेद प्रचार से हटकर केवल नशे के विरोध में आन्दोलन करने से हमें लगता है कि इससे वेद प्रचार का कार्य समाप्त हो रहा है और कई बार तो हमें इसमें षडयन्त्र की गन्ध भी आती है।** हमें लगता है कि नषीले पदार्थों की बिक्री से सरकार को बहुत बड़ी धनराशि राजस्व के रूप में मिलती है। वह तो उसे छोड़ेगी नहीं, शराब व अन्य नशों की लत में फंसे लोग भी इसे छोड़ेंगे नहीं, यह आन्दोलन शायद आने वाले 50 या 100 वर्षों में भी सफल न हो परन्तु इससे आर्यसमाज को हानि यह होगी कि उसका वेद प्रचार का कार्य पूर्णतः समाप्त हो जायेगा। अतः हमें लगता है कि आर्यसमाज, इसके विद्वानों व नेताओं को अपना सारा ध्यान केवल नशा विरोधी आन्दोलन में न लगाकर उसे वेद प्रचार पर केन्द्रित रखना चाहिये। यदि वेद प्रचार भली प्रकार से होगा तो नशे का सेवन भी समाप्त व नियंत्रित हो सकता है। **हम स्वयं भी आर्यसमाज के सदस्य बनकर ही नशे व अन्य अभक्ष्य पदार्थों के सेवन से बचे हुए हैं, किसी नशा विरोधी आन्दोलन के कारण नहीं। अतः लोगों को वेद प्रचार द्वारा आर्यसमाज का सदस्य बनाने का प्रयास ही सभी सामाजिक बुराईयों को दूर करने का उपाय हमें प्रतीत होता है। यदि हम वेद प्रचार में सफल होंगे तो नशा समाप्त भी हो सकता है और कम तो होगा ही।** यही स्थिति अन्य सामाजिक बुराईयों के विरुद्ध आन्दोलन करने की भी है। इसके साथ ही हमें आर्यसमाज से भी राजनीति व गुटबाजी को समाप्त कर योग्यतानुसार अधिकारी बनाने की दिशा में भी कुछ ठोस कार्य करना चाहिये। हमने कहीं चर्चा में सुना किसी सभा के मुकदमें उसके अधिकारियों द्वारा अपने प्रसिद्ध वकील महोदय को एक दिन के लिए दस लाख से भी अधिक रूपये दिये और विजयी हुए। आज समाजों की स्थिति यह है कि ऋषि के प्रति पूर्ण निष्ठावान वैदिक धर्मी लोग भी वहां के विषाक्त वातावरण के कारण समाज में नही जाते।

 **शरीर स्वस्थ तो समाज स्वस्थ व समाज स्वस्थ तो देश स्वस्थ होगा।** इसके साथ ही देश को परा व अपरा अर्थात् अध्यात्म व पदार्थ विद्याओं में भी उन्नत करना आर्यसमाज का उद्देश्य है। आर्यमसाज का आठवां नियम है कि **‘अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।’** सूक्ष्म रूप से देखने पर हमें लगता है कि हम जितना वैदिक ज्ञान के निकट होंगे उतना ही अध्यात्म और भौतिक विद्याओं की प्रगति होगी। आज अध्यात्म विद्या का समाज में स्थान प्रायः सर्वत्र उपेक्षणीय है। ईश्वर उपासना के नाम पर सारा संसार भिन्न-भिन्न मत-पन्थ व सम्प्रदायों में बंटा हुआ है। इनकी पूजा पद्धतियां क्या सत्य, यथार्थ व वास्ततिक पूजा पद्धतियां हैं? हमें इनमें त्रुटि दृष्टिगोचर होती है। जब मत-मतान्तरों में ईश्वर व जीवात्मा का स्वरूप ही भली प्रकार ज्ञात नहीं है तो फिर उनकी उपासना की पद्धतियां भी निर्दोष नहीं हो सकती। महर्षि पतंजलि व महर्षि दयानन्द जी ने वेदों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर, अर्थापत्ति से ईश्वर, जीवात्मा और सृष्टि का पूर्ण यथार्थ व सत्य ज्ञान प्राप्त कर, ईश्वर की उपासना पद्धतियों का निर्माण व उपदेश किया है। अतः यही पद्धतियां सम्यक एवं निर्दोष वा पूर्ण हैं। संसार को इ्रन्हीं का अभ्यास, अनुसरण व अनुकरण करना चाहिये। **विद्या के क्षेत्र में कर्म-फल सिद्धान्त के यथार्थ स्वरूप का प्रचार होना चाहिये। यह भी समाज सुधार का एक महत्वपूर्ण अंग है व हो सकता है। आज का समाज व विश्व यथार्थ कर्म-फल सिद्धान्त से सर्वथा दूर व उससे अनभिज्ञ है। आर्यसमाज ही अपने प्रचार से इसे दूर कर सकता है। हमें लगता है कि इस कर्म-फल सिद्धान्त के प्रचार की आर्यसमाज व इसके विद्वानों द्वारा भी उपेक्षा होती है। देश में हजारों व लाखों शोधार्थी हैं परन्तु इस विषय पर शायद ही किसी ने शोध किया हो? हमें लगता है कि वैदिक कर्म-फल सिद्धान्त को न मानना भी एक प्रकार से नास्तिकता है और इससे आर्यसमाज व संसार के सभी लोग अनाभिज्ञ है व इस ज्ञान के विपरीत आचरण कर रहे हैं। यह कर्म फल सिद्धान्त ही सम्पूर्ण वैदिक ज्ञान विज्ञान, कर्मकाण्ड, परम्पराओं व सृष्टि की उत्पत्ति व पालन का आधार है। अतः इस विषय को भी आर्यसमाज को अपने प्रचार के प्राथमिक विषयों में रखना चाहिये।**

 आज आवश्यकता है कि आर्य समाजों व इसके उत्सवों पर **‘वेद प्रचार क्या, क्यों व कैसे?’** पर गोष्ठियां हों। इनमें वेद प्रचार के स्वरूप, उसकी विधि व प्रणाली पर विचार हो। क्या नशाबन्दी व ऐसे अन्य विषयों पर आर्यसमाज व इसके नेताओं को अलग से आन्दोलन करने चाहिये, यदि हां तो उससे क्या लाभ होगा व वेद प्रचार को इससे लाभ होगा व हानि होगी?, इन सभी व ऐसे प्रश्नों के उत्तर भी खोजे जाने चाहियें। यदि आर्यसमाज वेद प्रचार की दशा व दिशा निर्धारित कर ले, अपने आपको अच्छी व्यवस्था में चला सके और वेद प्रचार की आवश्यकता के अनुरूप प्रचार करे तो इससे आर्यसमाज, देश व समाज को बहुत लाभ होगा और ऐसा करने वालों को कर्म-फल सिद्धान्त से भी अधिक पुण्यों के संचय का लाभ होगा जो उनके भावी जीवन व परजन्म के लिए उपयोगी होंगे। वैदिक यज्ञ व अग्निहोत्र भी एक उत्तम व श्रेष्ठ सामाजिक कार्य है। इस पर भी आर्यसमाज को ध्यान देना चाहिये। यज्ञ के नाम पर समाजों में जो आडम्बर किये जाते हैं उनकी भी समालोचना व समीक्षा कर्मकाण्ड के विशेषज्ञ विद्वानों द्वारा की जाती रहनी चाहिये। ऐसा न हो कि भविष्य में आर्यसमाज केवल यज्ञों के पाखण्ड तक ही सीमित हो जाये। इति।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**